व्यवसाय करने को आसान बनाने का अगला मोर्चा: समय से न्याय

09
अध्याय

कौन सहेगा समय-वक्त की मार
सितमगर के सितम
अब तो है बस न्याय की दरकार

-हैमलेट

यवसाय तथा वाणिज्य को आसान बनाने की दिशा में सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों के परिणाम सामने आने लगे हैं। व्यवसाय करने को आसान बनाने के लिए किए जा रहे प्रयासों का अगला मोर्चा अपीलीय तथा न्याय क्षेत्रों में लंबित, विलंबित तथा अनिर्णीत मामलों का निपटान करने से संबंधित है। इन स्थितियों के कारण विवाद समाधान तथा संविदाओं के क्रियान्वयन में बाधा उत्पन्न होती है, निवेश में कमी आती है, परियोजनाओं का क्रियान्वयन बाधित होता है, कर उगाही में अवरोध उत्पन्न होता है तथा अदालतों में मामलों पर खर्च बढ़ता है। कार्यपालिका/विधायिका तथा न्यायपालिका, जो ऊर्ध्वाधर सहकारी संघवाद के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु एक प्रकार से शक्तियों का क्षैतिज सहकारी पृथक्करण है, के बीच संयोजित/समन्वित क्रियाकलापों को करने से ''अदालतों में मामलों के निबटान में विलंब'' की समस्या का समाधान होगा तथा आर्थिक क्रियाकलापों को बढ़ावा मिलेगा।

भूमिका

9.1 हिन्दी फिल्म दामिनी में न्यायालय के समक्ष अभिनेता सनी देयोल का प्रसिद्ध विलाप ''तारीख पर-तारीख, तारीख-पर-तारीख'' तथा विलियम शेक्सपीयर की नाट्य कृति हैमलेट के पात्र के उपर्युक्त कथन में पर्याप्त समानता है। ये दोनों अभिव्यक्ति के दो भिन्न-भिन्न रूप हैं। एक में अभिनेता चीख-चीख कर अत्यधिक भावुकतापूर्ण रूप में अपनी वेदना को अभिव्यक्त करता है तो दूसरे में नाटक का पात्र अत्यधिक सोच-विचार करके अपने मन की बात करता है किंतु बावजूद इसके ये दोनों ही द्वारा न्याय प्राप्त करने में विलंब और इस कारण न्याय से वंचित होने के कारण उत्पन्न हताशा को बलपूर्वक अभिव्यक्ति प्रदान करने में एक सी भावना को प्रदर्शित किया गया है।

9.2 भारत विश्व बैंक की ईज ऑफ डुइंग बिजनेस (ईओडीबी), 2018 में पहली बार 30 स्थान ऊपर उछलकर चोटी के 100 देशों की श्रेणी में शामिल हुआ है। इसकी यह रैंकिंग सरकार द्वारा व्यापक संसूचकों के संदर्भ में किए जा रहे सुधारात्मक उपायों को सूचित करती हैं। भारत कराधान तथा शोधन अक्षमता से संबंधित संसूचकों में क्रमशः 53 और 33 स्थान ऊपर आया है जो कराधान के क्षेत्र में किए गए प्रशासनिक सुधारों तथा शोधन अक्षमता एवं दिवा. लियापन संहिता आईबीसी 2016 (देखें बाक्स सं. 3.1 एवं 3.2; आर्थिक समीक्षा खण्ड-2 का अध्याय 3) को पारित किए जाने के कारण हुआ है। इसने अल्पसंख्यकों के हितों को सुरक्षा प्रदान करने तथा रोजगार शुरू करने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों को ऋण उपलब्ध कराने की दिशा में भी निरंतर प्रयास किए हैं तथा सरकार द्वारा बिजली उपलब्ध कराने के क्षेत्र में किए गए सुधारों के कारण ईओडीबी 2017 में 70 स्थान ऊपर उठकर इसने बिजली प्राप्त करने के मामले में एक उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है। इस वर्ष की रिपोर्ट में माल तथा सेवाकर (जीएसटी) जैसे अन्य उपायों को शामिल नहीं किया जिससे अगामी वर्षों में भारत की

[1] देखें नॉर्थ (1990); एंगरमैन एंड सोकोलॉफ (2000); ऐसेमोग्लु जॉनसन एंड रोबिन्सन (2001); रॉड्रिक, सुब्रमण्यन तथा ट्रेब्बी (2004); ऐसेमोग्लु एंड जॉनसन (2005); ला पोर्टा एवं अन्य (1998, 1999); ऑन इंडिया, देखें कपूर एंड मेहता (2007); कपूर, मेहता एंड वैश्नव (2017); एंड चेमिन (2012)।

रैंकिंग में और अधिक सुधार होने की आशा है।

9.3 बावजूद इस प्रेरक प्रगति के, भारत संविदाओं को अमली जामा पहनाने से संबंधित संसूचकों के मामले में लगातार पिछड़ रहा है तथा जारी की गई हालिया रिपोर्ट में इसका स्थान 172 से सुधरकर 164 पर पहुंचा है तथा इस रैंकिंग में यह पाकिस्तान, कांगों तथा सूडान जैसे देशों से भी पीछे है (देंखे अनुबंध 1)

9.4 आर्थिक वृद्धि तथा विकास में कारगर, दक्ष तथा शीघ्रतापूर्वक संविदा को प्रवर्तित करने के महत्व की अनदेखी नहीं की जा सकती। एक पारदर्शी तथा कुछ हद तक कानूनी एवं कार्यकारी व्यवस्था, जो दक्ष न्यायिक प्रणाली द्वारा समर्थित हो तथा नागारिकों के संपत्ति अधिकारों की उपयुक्त रूप में सुरक्षा करती हो, संविदाओं की पवित्रता को बनाए रखती हो तथा संविदा में शामिल पक्षकारों के अधि कारों तथा उत्तरदायित्वों को लागू करती हो, व्यवसाय तथा वाणिज्य[1] की पूर्वापेक्षा है।

9.5 सरकार ने संविदा प्रवर्तन व्यवस्था को तीव्रतर बनाने तथा उसमें सुधार लाने के लिए अनेक उपाय किए हैं। [2]उदाहरण के लिए सरकार ने अप्रयुक्त हो चुके 1000 से भी अधिक कानूनों को समाप्त कर दिया; ट्रिब्यूनलों को युक्तिसंगत बनाया; मध्यस्थम तथा संराधन अधिनियम, 2015 में संशोधन किया; उच्च न्यायालय का वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक प्रभाग तथा वाणिज्यिक अपील प्रभाग अधिनियम, 2015 पारित किया; अंत: सरकारी कानूनों की संख्या कम की; तथा न्यायपालिका के बोझ को कम करने के लिए लोक अदालत कार्यक्रम का विस्तार किया। सरकार ने कानूनी सांतत्य को सुनिश्चित करने तथा नियमों व नियमों में अप्रत्याशित परिवर्तनों के कारण उत्पन्न अव्यवस्था की स्थिति में कमी लाने के लिए एक भावी कानूनी व्यवस्था को भी आरंभ किया है। न्यायपालिका ने महत्वपूर्ण नेशनल जुडिशियल डेटा ग्रिड (एनजेडीजी) का विस्तार किया है तथा यह सुनिश्चित करने के काफी सन्निकट है कि देश में हर उच्च न्यायालय का आधुनिकीकरण हो जाए, यह एक ऐसा प्रयास है जिसे ईओडीबी, 2018 में स्थान दिया गया है। तथापि, आर्थिक क्रियाकलाप कानूनी व्यवस्था में व्याप्त देरी तथा मामलों के लंबित होने की स्थिति के कारण प्रभावित हो रहा है। इस अध्याय में मुख्य रूप से आर्थिक समीक्षा[2] के लिए संकलित किए गए नए आंकड़ों पर आधारित इन घटनाक्रमों पर व्यापक प्रकाश डाला गया है।

9.6 प्राप्त निष्कर्ष सरल तथा निरपेक्ष हैं जिनका नीचे उल्लेख किया गया है:

i आर्थिक अभियोजन से संबंधित मामलों के निपटान में देरी तथा उनके लंबित होने की घटना उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों, आर्थिक ट्रिब्यूनलों तथा कर विभाग में काफी अधिक संख्या में हैं और इनमें लगातार वृद्धि हो रही है जिनके कारण परियोजनाओं के रुके रहने, कानूनी लागत में वृद्धि होने, कर राजस्व में वृद्धि होने तथा अधिक व्यापक रूप में निवेश में कमी आने के कारण अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा है।

ii मामलों के निपटान में देरी तथा उनके लंबित होने की घटना का कारण न्याय व्यवस्था पर अधिक कार्यभार होना है जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्राधिकार में विस्तार होने एवं न्यायालयों द्वारा हिदायत तथा स्थगन आदेश जारी करने की घटना होती है; कर से संबंधित अभियोजनों में यह स्थिति सरकार द्वारा अपीलीय प्रक्रम के प्रत्येक चरण में लगातार विफलता का सामना करने के बावजूद सरकार द्वारा मुकदमेबाजी पर अड़े रहने के कारण उत्पन्न होती है;

iii न्यायालयों तथा सरकार द्वारा यदि एक साथ मिलकर कार्य किया जाए तो इससे स्थिति में पर्याप्त सुधार हो सकता है।

न्यायालयों में मामलों का लंबित पड़ा रहना तथा निपटान में देरी: तथ्य

आर्थिक ट्रिब्यूनल

9.7 मूल रूप से अधिक राशि वाले वाणिज्यिक मामलों को देखने वाले 6 प्रमुख अपीलीय ट्रिब्यूनलों के विश्लेषण से दो प्रकार के पैटर्न ज्ञात होते हैं; पहला, इन सभी 6 ट्रिब्यूनलों

---

[2] आंकड़े उच्चतम न्यायालय, पांच प्रमुख उच्च न्यायालय (दिल्ली, मद्रास, बंबई, कलकत्ता तथा इलाहाबाद), तथा छह सर्वाधिक महत्वपूर्ण आर्थिक ट्रिब्यूनलों: दूरसंचार (दूरसंचार विवाद निपटान तथा अपील ट्रिब्यूनल-टीडीएसएटी), विद्युत (विद्युत अपीलीय ट्रिब्यूनल-एपीटीईएन; पर्यावरण (राज़्ट्रीय हरित ट्रिब्यूनल-एनजीटी), उपभोक्ता संरक्षण (राज़्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोज़ आयोग-एनसीडीआरसी), केंद्रीय आय कर (आयकर अपील ट्रिब्यूनल-आईटीएटी), तथा केंद्रीय अप्रत्यक्ष कर (सीमाशुल्क, उत्पाद शुल्क तथा सेवा कर अपील ट्रिब्यूनल, सीईएसटीएटी) से संबंधित है।

[3] इस अध्याय के संदर्भ में अभिव्यक्ति ''लंबित'' का अर्थ ऐसे सभी मामलों से है जो दायर किए गए किन्तु जिनका निपटान नहीं हुआ है चाहे उन्हें कभी भी उर्ज़्व क्यों न कराया गया हो। इस अध्याय में 'लंबित' मामलों की समय अवधि का अर्थात् मामले के लंबित रहने की सामान्य अवधि की तुलना में अधिक समय तक किसी मामले को न्यायिक प्रणाली में बने रहने के संबंध में अलग से उल्लेख नहीं किया गया है। (देखें रिर्पो संख्या 245 बकाया तथा पिछले मामले: अतिरिक्त न्यायिक जनशक्ति का सृजन: भारत का विधि आयोग (2014)

चित्र 1: लंबित मामले-स्टॉक (6 अपीलीय ट्रिब्यूनल), 31.10.2017 के अनुसार

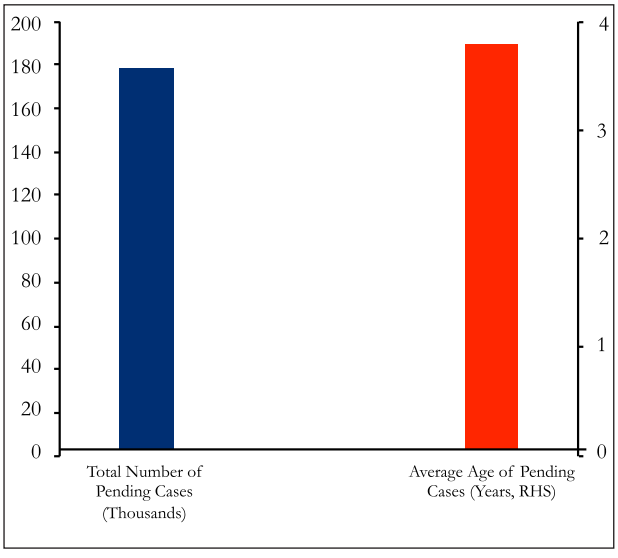

स्रोत: आंकड़े 6 अपीलीय न्यायाधीकरण और दक्ष से प्राप्त आंकड़े

चित्र 2: लंबित मामले: प्रवाह (6 अपीलीय ट्रिब्यूनल, 2000-2017, आंकड़े हजार में), 31.10.2017 के अनुसार

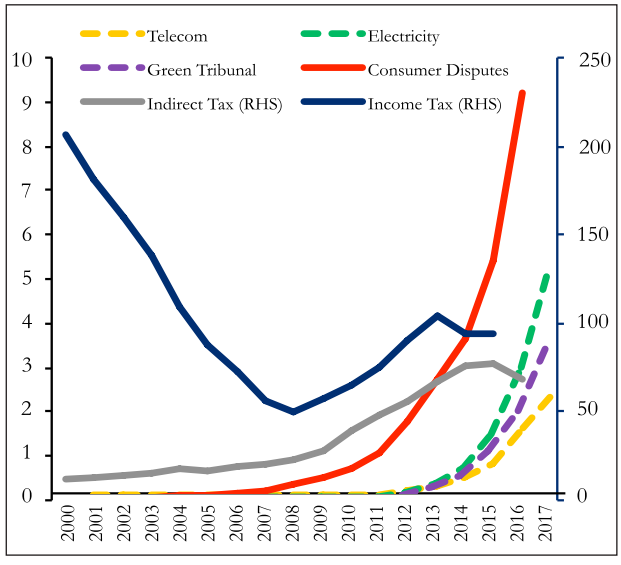

स्रोत: आंकड़े 6 अपीलीय न्यायाधीकरण और दक्ष से प्राप्त आंकड़े

में मामलों के लंबित होने की दर काफी अधिक है जिनके लंबित मामलों की संख्या लगभग 1.8 लाख होने का अनुमान लगाया गया है (चित्र 1)। दूसरा, समय के अनुसार मामलों के लंबित होने की दर में बहुत तेजी से वृद्धि हुई है। जैसाकि चित्र 2 में दर्शाया गया है, लगभग सभी ट्रिब्यूनलों ने अपना कामकाज नियंत्रणीय संख्या में मामलों के साथ शुरू किया था, और हर वर्ष दाखिल किए गए मामलों को निपटाने में लगे थे किंतु इन मामलों की संख्या इन सभी ट्रिब्यूनलों में शीघ्र ही नियंत्रण से अधिक हो गई। वर्ष 2012 की तुलना में अब इन ट्रिब्यूनलों में नहीं निपटाए गए मामलों की संख्या

चित्र 3: लंबित आर्थिक मामले: स्टॉक (5 उच्च न्यायालय), 31.10.2017 की स्थिति के अनुसार

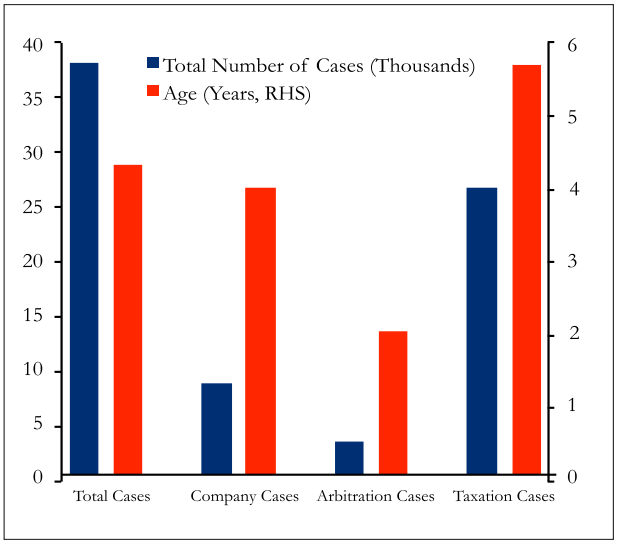

स्रोत: आंकड़े 5 उच्च न्यायालयों और दक्ष से प्राप्त आंकड़े

चित्र 4: लंबित आर्थिक मामले: प्रवाह (5 उच्च न्यायालय, 2008-2016-आंकड़े हजार में 31.10. 2017 की स्थिति के अनुसार)

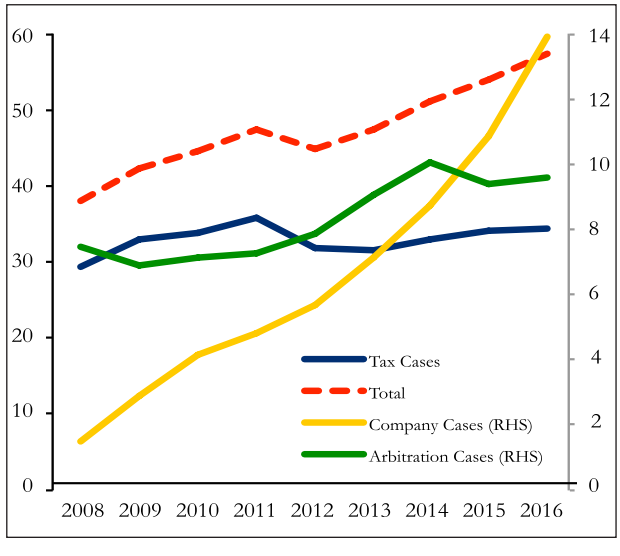

स्रोत: आंकड़े 5 उच्च न्यायालयों से प्राप्त आंकड़े

[4] [4]बंबई उच्च न्यायालय जिसके द्वारा आर्थिक तथा वाणिज्यिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया जाता है, कुल लंबित मामलों की संख्या 1993 में 23 लाख मामलों से बढ़ कर 2016 में लगभग 41 लाख हो गई है (देखें अनुबंध 3)।

में 25 प्रतिशत वृद्धि हुई है। इन सभी ट्रिब्यूनलों में मामलों के लंबित होने की औसत अवधि 3.8 वर्ष है। यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि दो मामलों अर्थात दूरसंचार एवं विद्युत से संबंधित मामलों में दाखिल किए गए मामलों की संख्या में तीव्र वृद्धि मुख्य रूप से उच्चतम न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने के कारण हुई है (देखे अनुबंध 2)।

उच्च न्यायालय

9.8 इसके अतिरिक्त, ट्रिब्यूनलों को सृजित करने से देश के उच्च न्यायालयों में मामलों की लंबित संख्या में कोई बदलाव नहीं आया और न ही इन न्यायालयों की अन्य आर्थिक मामलों के निपटान की क्षमता में ही कोई परिवर्तन हुआ। आर्थिक समीक्षा के लिए पांच उच्च न्यायालयों में लंबित 3 प्रकार के आर्थिक मामलों का अध्ययन किया गया। उच्च न्यायालय में लंबित मामलों की समग्र संख्या (अनुबंध 3) तथा उच्च न्यायालयों में इन आर्थिक मामलों के लंबित पड़े होने के संबंध में मामलावार संख्या (चित्र 4) में निरंतर वृद्धि हो रही है। राष्ट्रीय न्यायिक आंकड़ा ग्रिड के अनुसार 2017 के अंत तक देश के उच्च न्यायालयों में लंबित पड़े मामलों की कुल संख्या 3.5 मिलियन होगी। हालांकि आर्थिक मामलों की संख्या अन्य मामलों की तुलना में कम है, किंतु उनके लंबित पड़े होने की औसत अवधि अधिकांश मामलों की तुलना में बदतर स्थिति में है जो 5 प्रमुख उच्च न्यायालय में लगभग 4.3 वर्ष है। 6 मामलों की औसत लंबित अवधि मुख्य रूप से प्रति मामला लगभग 6 वर्ष है जो एक दयनीय स्थिति है। (चित्र 3 और 4)

9.9 लंबित मामलों की संख्या में कमी यदि हुई हो तो ऐसा या तो लंबित मामलों की गणना विधि में बदलाव के कारण या फिर आर्थिक-क्षेत्राधिकार में बदलाव के कारण हुआ जो उच्च न्यायालयों में मूल पक्ष से जिला न्यायालयों में मामले का अंतरित किए जाने के कारण हुआ। ऐसे बदलावों के बाद लंबित मामलों की संख्या में यदि अधिक दर पर नहीं तो पूर्व से समान वृद्धि जारी रही (देखें अनुबंध 3)। किए गए कुछ हस्तक्षेपी उपायों जैसेकि राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड की स्थापना तथा ट्रिब्यूनलों की स्थापना किए जाने से स्थिति को सुधारने में सहायता मिली है किंतु इस दिशा में और अधिक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।[4]

मामलों का लंबित पड़ा रहना तथा उनके निपटान में देरी: संभावित कारण

उच्च न्यायालय: विवेकाधीन क्षेत्राधिकार में विस्तार के कारण काम के बोझ में वृद्धि

9.10 उच्च न्यायालयों में लंबित आर्थिक मामलों की संख्या

सारणी 1: बंबई तथा दिल्ली उच्च न्यायालयों में सिविल मुकदमों के लंबित रहने की औसत अवधि

न्यायालय का नाम	लंबित मुकदमें	औसत विलंब (वर्षों में)
दिल्ली उच्च न्यायालय	19,740	5.8
दिल्ली निम्न न्यायपालिका	15,223	3.7
बॉम्बे उच्च न्यायालय	16,099	6.1
महाराष्ट्र निम्न न्यायपालिका*	1,02,931	5.6

स्रोत: दक्ष

* ग्रेटर बॉम्बे की निम्न न्यायपालिका जिसमें बॉम्बे उच्च न्यायालय का मौलिक क्षेत्राधिकार शामिल है, के मुकदमों का ब्यौरा उपलब्ध नहीं है।

5. ऊँचे न्यायालय अंतिम सहारा बनने के बजाय पहला सहारा बन गए हैं तथा इन न्यायालयों ने सांविधानिक कानूनों और दूसरों के कृत्य के कारण पीड़ित होने वाले व्यक्ति को न्याय दिलाने वाले कानूनों को संयोजित कर दिया है तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी कानूनों के बीच परंपरागत भेद को समाप्त किया है। इस विस्तार का तात्कालिक प्रभाव यह पड़ा है कि निचली अदालतों में गैर-सरकारी कानून तंत्र को विकसित करने की क्षमता निरंतर कानूनी दायरे से बाहर निकल रही है। (बाल गणेश, 2016)

6 उच्चतम न्यायालय ने 1958 में इस अधिकार क्षेत्र को सीमित करते हुए यह निर्धारित किया कि न्यायाल्य तथा ट्रिब्यूनल ''अपने सांविधिक अधिकार क्षेत्र से आगे अपनी शक्तियों का प्रयोग न करें किंतु उन्हें सृजित करने वाले या उन्हें कार्य सौंपने वाले संविधानिक कानून के भीतर रहते हुए कानूनों को सही रूप से लागू करें।'' (जी वीरप्पा पिल्लई बनाम रमन एंड रमन लिमिटेड, एआईआर 1952 उच्चतम न्यायालय 192)। उच्चतम न्यायालय ने रिट क्षेत्राधिकार के अंतर्गत अपीलीय शक्तियों को प्रयोग में लाने के संबंध में चेतावनी जारी करते हुए कहा कि ''जबतक ये प्राधिकरण कानून का अक्षरश: पालन करते हैं तब तक उच्च न्यायालयों को इस बात से कोई सरोकार नहीं है कि उन शक्तियों को किस प्रकार प्रयोग किया गया।'' (नगेंद्र नाथ बोरा बनाम पर्वतीय प्रभाग अपील आयुक्त, असम, एआईआर 1958 एआईआर 398)

7 इनमें से अनेक रिट याचिकाएं प्रशासनिक कानून, सेवा कानून, कराधान कानून, श्रम कानून तथा ट्रिब्यूनलों द्वारा पारित किए गए आदेशों से संबंधित है।

8 अनुबंध 6 भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 तथा दंड प्रक्रिया संहित की धारा 482 के आधार पर उच्च न्यायालय के निर्णयों की संख्या के दृष्टिगत 1980-2016 के दौरान की दीर्घावधि के दौरान रिट क्षेत्राधिकार तथा अपराध दमन क्षेत्राधिकार के विस्तार से संबंधित है।

9 एकल जज मामलों की सुनवाई करता है; रजिस्ट्रार मामलों का विचारण आयोजित करना है तथा उन मामलों से संबंधित अपील उसी उच्च न्यायालय के डिविजन बैंचों में दायर की जाती है। इन न्यायालयों में मूल पक्ष से संबंधित मामलों का अनुपात आर्थिक क्षेत्राधिकार में वृद्धि से घट-बढ़ रहा है। उदाहरण के लिए, दिल्ली उच्च न्यायालय के मामले में आर्थिक क्षेत्राधिकार 2003 में 5 से बढ़ाकर 20 लाख तथा वर्ज़ 2016 में 20 लाख से बढ़ाकर 2 करोड़ कर दिया गया है।

10 भारत का उच्चतम न्यायालय वर्तमान में मूल अभियोजन स्वत: संज्ञान आधार पर रिट याचिका (सिविल) संख्या 8/2017 के प्रबंधन में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा सिविल वाद में निपटान में विलंब की मानिटरिंग कर रहा है। उक्त मामले के अनुसरण में 1 मार्च 2018 को लागू होने के कारण उच्च न्यायालय, दिल्ली ने दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियम, 2018 को अधिसूचित किया।

चित्र 5: उन मुकदमों की प्रतिशत हिस्सेदारी जिनमें उच्चत्तम न्यायालय ने अनुमति प्रदान की।

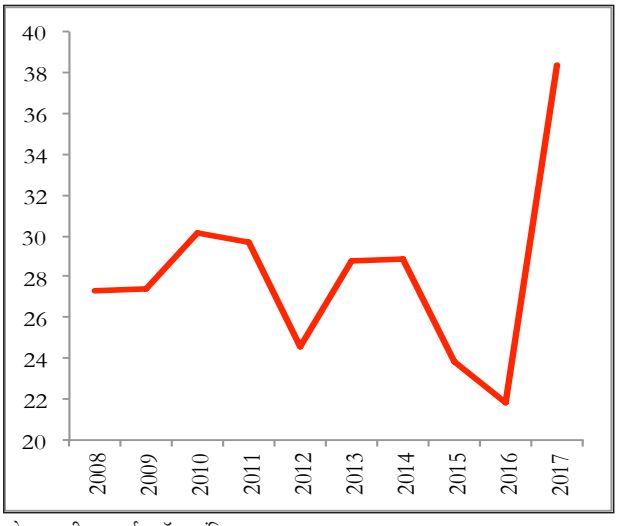

स्रोत: सुप्रीम कार्ट ऑफ इंडिया

चित्र 6: उच्चत्तम न्यायालय की दायर सूची में एसएलपी क्षेत्राधिकार की प्रतिशत हिस्सेदारी।

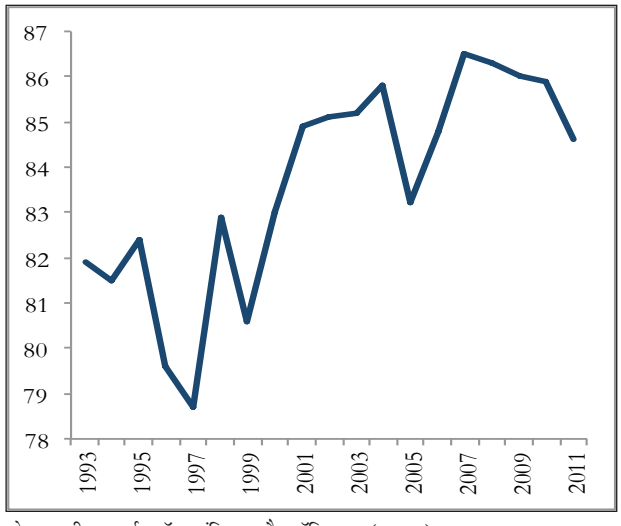

स्रोत: सुप्रीम कार्ट ऑफ इंडिया और रॉबिन्सन (2013)[ण]

में अधिकाधीक वृद्धि होने का एक कारण न्यायालयों का अति भारित होता है। इसके अतिरिक्त, आर्थिक तथा वाणिज्यिक मामले प्राय: जटिल होते हैं, इनके निबटान के लिए आर्थिक विशेषज्ञता की तथा न्यायसंगत रूप में अधिक समय की भी आवयकता होती है। तथापि, कुछ मामलों में यह अतिभार अन्य क्षेत्राधिकार में संतुलन या समग्र प्रशासन तथा दक्षता में सुधार के लिए बिना कोई पर्याप्त उपाय किए न्यायालयों के विवेकसम्मत क्षेत्राधिकार में विस्तार के कारण भी है।

9.11 उदाहरण के लिए, भारत के संविधान, के अनुच्छेद 226 तथा 227 के अंतर्गत उच्च न्यायालयों को सावध ानीपूर्वक सीमित रिट से संबंधित क्षेत्राधिकार प्रदान किए गए हैं।[6] तथापि, व्यवहार में उच्च न्यायालायों ने इस उपबंध को एक अनुमत रूप में तथा व्यापक रूप में एक समयावधि के दौरान क्रियान्वित करने के संबंध में व्याख्या की है, जिससे अनुच्छेद 226 से संबंधित मामलों में पर्याप्त वृद्धि हुई है। वर्तमान में 6 उच्च न्यायालयों में रिट आवेदन लंबित है जो

---

11 वर्ष 1950 में, उच्चत्तम न्यायालय ने यह निर्णय लिया कि वह ''तब तक विशेष अनुमति याचिका प्रदान नहीं करेगा जब तक कि यह न दर्शाया गया हो कि आपवादिक और विशेष परिस्थितियां विद्यमान हैं, बहुत अधिक और गंभीर अन्याय हुआ है और विचाराधीन मामले में जिस निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है उसकी समीक्षा को न्यायसंगत ठहराने के लिए पर्याप्त गंभीरता है।'' प्रीतम सिंह बनाम राज्य, 1950 एससीआर 453; एआईआर 1950 एससी 169: इस उच्च मानक में दशकों से छूट दी जाती रही है, जिसके परिणामस्वरूप 2004 में उच्चत्तम न्यायालय ने अपना मत रखा कि ''संविधान के इन स्पष्ट अधिस्वरों के बावजूद कि न्यायाधिकार में कानून को इस प्रकार व्यवस्थित करना निमित्त है ताकि उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों को इस न्यायालय द्वारा स्थापित किए गए और निश्चित किए गए कानून के सिद्धांतों का अनुपालन करने में सक्षम बनाया जा सके और यह कि इस न्यायालय का अभिप्राय व्यक्तिगत मामलों में अन्याय करना नहीं था, अनुभव बताता है कि स्वयं पर लगाए गए ऐसे प्रतिबंधों ने न्यायालय को व्यक्तिगत विवादों को तत्परता से निपटाने में बाधित नहीं किया है।'' जबकि ये प्रतिबंध अनुच्छेद 136 के तहत इसके अपने विवेकाधिकार को बेड़ियों के समान जकड़े हुए हैं। जैमशेड होर्मुसजी वाडिया बनाम बॉर्ड ऑफ ट्रस्टीज़, पोर्ट ऑफ मुंबई (2004)3 एससीसी 214

12 ''भारत के उच्चत्तम न्यायालय की एक खंड पीठ ने मथई[@] जोबी बनाम जॉर्ज (2016) 7 एससीसी 700 मामले में स्वयं को एक नियमित अपीलीय न्यायालय में रूपांतरित करने संबंधी निर्णय को पलटने के लिए अनुच्छेद 136 के तहत छुट्टी प्रदान करने के मानदंडों की समीक्षा करने के लिए एक मामले को संविधान पीठ के पास भेजा था। तथापि, 11 जनवरी, 2016 को पांच न्यायधीशों की एक संविधान पीठ ने दिशा-निर्देश जारी करते हुए या उस किस्म के मामलों को सीमित करते हुए, जिनमें अपील करने के लिए विशेष छुट्टी प्रदान की जा सकती है, अनुच्छेद 136 के कार्य क्षेत्र को कम करने से मना कर दिया था।

13 साक्ष्य यह भी दर्शाता है कि यह बढ़ा हुआ कार्यभार मुख्यत: धन, सरकार और भौगोलिक रूप से नई दिल्ली के समीप स्थित अपीलकर्ताओं के कारण है (रोबिन्सन 2013).

14 मज़े की बात यह है कि इसे एसएलपी के कार्यबोझ की चिंता के बारे में संविधान सभा की बहसों के दौरान पहले ही जान लिया गया था और चर्चा कर ली गई थी: ''उच्चत्तम न्यायालय में कार्य के संभावित संकुलन के प्रश्न में अनेक माननीय सदस्यों को इन संशोधनों के उपबंधों का विरोध करने के लिए शामिल किया गया है। इस विरोध के पीछे उस न्यायालय में गंभीर संकुलन पैदा होने का डर और यह भी डर कि उन मामलों को निपटाने के लिए हमें और अधिक न्यायधीशों को नियुक्त करना होगा सता रहा है। तथापि, मैं मानता हूं कि यह डर न्यायसंगत नहीं है। जहां तक कानून के प्रश्न का संबंध है, यह 'कानून का अतिमहत्वपूर्ण प्रश्न' ही है जो किसी पार्टी को सफलतापूर्वक प्रमाण पत्र या विशेष छुट्टी प्राप्त करने में सक्षम बनाएगा'' संविधान सभा की बहस दिनांक 14 जून, 1949। इन बहसों में यह स्पष्ट किया गया कि एसएलपी के क्षेत्राधिकार का सहारा ''न्याय प्रदान करने के किसी सिद्धांत के किसी गंभीर उल्लंघन या कतिपय सिद्धांतों के ऐसे उल्लंघन जो आदमी और आदमी के बीच के न्याय के प्रशासन की बुनियादों को प्रभावित कर रहे हों''[13] के मामले में ही लिया जाएगा। एसएलपी क्षेत्राधिकार में पहुंचने के लिए मानकों में दी गई ढील के आलोक में, शायद न्यायालय के लिए संविधान के अनुच्छेद 136 के कार्यक्षेत्र पर पुन: विचार करने का और आस्ट्रेलियाई न्यायपालिका अधिनियम, 1903 या अमरीकी उच्चतम न्यायालय नियमावली के समान मानदंडों को निर्धारित करने का यह सही समय है ताकि न केवल, उच्च न्यायालय में आर्थिक और अन्य मुकदमों के बढ़ते विलंबन को नियंत्रित किया जा सके बल्कि देश के सर्वोच्च संवैधानिक न्यायालय के रूप में इसकी छवि को भी बनाए रखा जा सके।

न्यायालय में लंबित कुल मामलों का 50-60% है, जिनमें लंबित रहने की औसत अवधि 3-10 वर्ष है (अनुबंध-4)। 5 उच्च न्यायालयों के संबंध में 2008-2013 में उपलब्ध आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि हाल के वर्षों के दौरान लंबित रिट याचिकाओं की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है जिससे अन्य मामलों के लिए न्यायनिर्णयन में काफी कम समय मिल पाता है (अनुबंध 5)।

उच्च न्यायालय: मूल पक्ष क्षेत्राधिकार से कार्य का अतिभार

9.12 देश के कुछ उच्च न्यायालयों का अनन्य मूल क्षेत्राधिकार होता है जिसके अंतर्गत उच्च न्यायालय, न कि संगत निचले न्यायालय, कुछ मामलों के लिए प्रथम दृष्टया न्यायालय बन जाते है।[8] न्यायालय में दायर मामलों में पर्याप्त संख्या उन्हीं मामलों की होती है। दिल्ली और मुम्बई उच्च न्यायालयों का इन मामलों के संबंध में मूल क्षेत्राधिकार है जो इन न्यायालय में मामलों की कुल संख्या का लगभग 10-15% है (अनुबंध 7)। वर्ष 2014 में दिल्ली उच्च न्यायालय में मूल पक्ष के मामलों की हिस्सेदारी 30% थी। आर्थिक समीक्षा के लिए संकलित किए गए आंकड़ों से ज्ञात होता है कि जिला न्यायालयों की तुलना में उच्च न्यायालयों में मामलों के निपटान में अधिक समय लगता है।

सारणी 2: लंबित आईपीआर मुकदमें–स्टॉक (दिल्ली उच्च न्यायालय)

क्र. सं.	श्रेणी	कुल मामले	लंबित मामले	लंबित मामले प्रतिशत में
1.	कॉपीराईट	172	120	69.8%
2.	पेटेंट	98	40	40.8%
3.	ट्रेडमार्क	1219	704	57.8%
4.	अन्य	66	38	57.5%
	कुल	**1555**	**902**	**58%**

स्रोत: सुप्रीम कार्ट ऑफ इंडिया

दिल्ली उच्च न्यायालय में सिविल मुकद्दमों के लंबित रहने की औसत अवधि 5-8 वर्ष है जबकि दिल्ली में निचली अदालतों में इन मामलों के लंबित रहने की औसत अवधि 3-6 वर्ष है (सारणी-1)।

उच्चतम न्यायालय: विशेष अनुमति याचिका (एसए. सपी) क्षेत्राधिकार का विस्तार

9.13 उच्च न्यायालयों की तरह उच्चत्तम न्यायालय के पास भी मुकदमों की बढ़ती संख्या के कारण बढ़ते आर्थिक मुकदमों को निपटाने के लिए पर्याप्त क्षमता नहीं है। (देखें अनुबंध 8)। उच्चत्तम न्यायालय के मामले में, यह बोझ कुछ हद तक भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष छुट्टी याचिकाओं से उत्पन्न हुआ है। इस अनुच्छेद के तहत किसी भी पक्ष को किसी भी न्यायालय या अधिकरण से सीधे उच्चत्तम न्यायालय में जाने का अधिकार प्रदान किया गया है। प्रारंभ में केवल ''आपवादिक परिस्थितियों'' में लागू एसएलपी अब उच्चत्तम न्यायालय की कार्य पद्धति पर अत्यधिक बोझ बन गई हैं।''[10]

9.14 जैसा कि चित्र 6 5 में दर्शाया गया है, जिस दर पर उच्चत्तम न्यायालय में संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष छुट्टी याचिकाएं दायर होती हैं वह वर्ष 2008 की लगभग 15% से बढ़कर वर्ष 2016 में लगभग 40% हो

चित्र 7: लंबित मुकदमों की औसत आयु-स्टॉक (स्थगनादेश प्राप्त और अंतिम निपटान आईपीआर मुकदमें, दिल्ली उच्च न्यायालय)

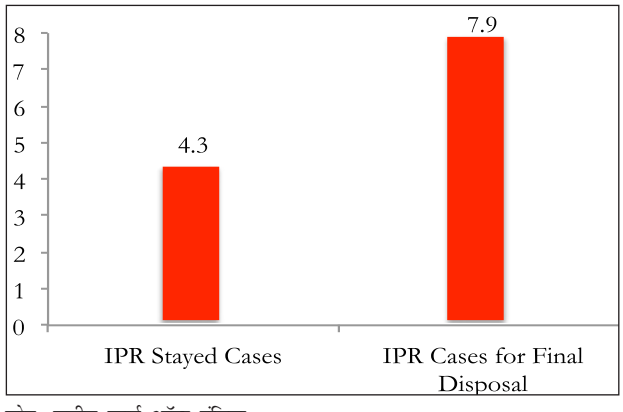

स्रोत: सुप्रीम कार्ट ऑफ इंडिया

15 [15]अंतरिम चरण पर निषेधाज्ञाओं को प्रदान करने के बढ़ते रूझान से उच्च न्यायालयों के समक्ष आईपीआर मुकदमेबाजी की प्रकृति मौलिक रूप से विकृत हो गई है, जिसके फलस्वरूप हाल ही के एक मामले में उच्चत्तम न्यायालय को यह पूछने पर विवश कर दिया कि ''यदि उच्च न्यायालय ने ऐसा सुविस्तृत (अंतरिम) निर्णय केवल इस तथ्य की प्राप्ति पर लिखना उचित समझा होता कि दिल्ली उच्च न्यायालय में बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) के मामलों में अंतरिम आदेश पक्षकारों को लंबी समयावधि के लिए अधिशासित करेंगे तो मुख्य मुकदमें का निपटान बहुत दूर की बात होती।'' मै. एजेड टेक (इंडिया) और अन्य बनाम मै. इन्टेक्स टेक्नोलोज़ीज (इंडिया) लि. और अन्य।

16 https://spicyip.com/2017/06/143-patent-infringement-lawsuits-between-2005-and-2015-only-5-judgments.html.

सारणी 3: रोकी गई परियोजनाएं–स्टॉक (6 मंत्रालय, 31.10.2017 की स्थिति के अनुसार)

मंत्रालय	रोकी गई परियोजनाएं	कुल मूल्य (करोड़ रु.)	रोक की अवधि
पोत परिवहन	2	2620	5.9
विद्युत	11	23,913	3
सड़क	30	11,216	3
पेट्रोलियम	2	342	0.9
खान	12	106	4.5
रेल	12	13,882	3
कुल	**52**	**52,081**	**4.3**

स्रोत : रक्षा मंत्रालय के आंकड़े

सारणी 4: एसबीआई द्वारा वित्त पोषित परियोजनाएं जिन्होंने आरबीआई द्वारा अतिरिक्त समय मांगा–विगत 3 वर्ष

परियोजनाओं की	कुल परियोजना मूल्य	मांगे गए समय-विस्तार
11	33540	28

स्रोत : स्टेट बैंक ऑफ इंडिया

गई है। इसके विपरीत, अमरीका और कनाडा के उच्चत्तम न्यायालय में इनके समक्ष दायर मुकदमों की कुल संख्या का क्रमश: 3% और 9% एसएलपी दायर होती हैं (देखें अनुबंध-9)। विशेष छुट्टी प्रदान करने के इस बढ़ते रुझान से उच्चत्तम न्यायालय की प्रकृति मौलिक रूप से विकृत हो

चित्र 8: कारपोरेट भारत के विधिक खर्चे: प्रवाह (1998-2016, हजार में)

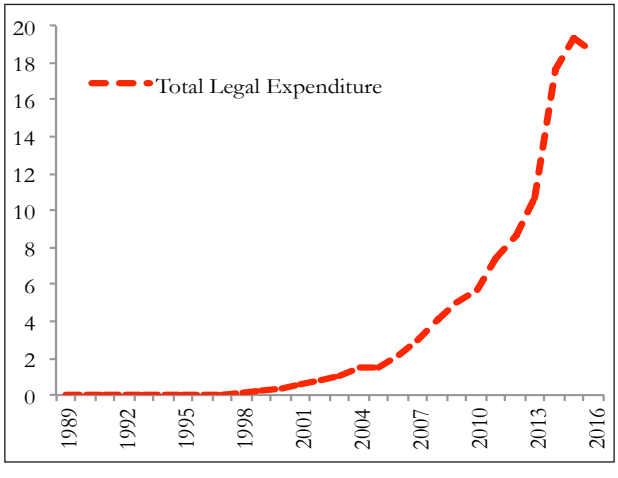

स्रोत: सेंटर फॉर मॉनीटरिंग इंडियन इकॉनोमी प्रा.लि. (सीएमआईई) का प्रोवेस डाटाबेस[17]

गई है और इससे अनिर्णीत मुकदमों की संख्या उच्च स्तर पर पहुंच गई है, जिसमें लगभग 85% मुकदमें एसएलपी के हैं (चित्र 6)।[12] उच्चत्तम न्यायालय के एसएलपी क्षेत्राधिकार में अन्य मामले जैसे कि स्थानांतरण और समीक्षा याचिकाएं शामिल नहीं हैं, जिनकी न्यायालय के रजिस्टर में लगभग 4-6% की भागीदारी हैं (अनुबंध-10)[13]। इसके साथ-साथ, रिटों (न्यायिक आदेशों) मुकदमों की हिस्सेदारी भी घट गई हैं। जो 1993 में लगभग 7% थी वर्ष 2011 में 2% से भी नीचे रह गई है।[14]

निषेधाज्ञाओं और स्थगनादेशों का सहारा

9.15 अनिर्णीत मामलों की संख्या न्यायालयों द्वारा लगाई गई मुकदमों की निषेधाज्ञा के परिणामस्वरूप भी बढ़ी है। उदाहरण के लिए, नीचे सारणी 2 में दर्शाए गए बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) के मुकदमों के मामले में, निषेधाज्ञाओं के परिणामस्वरूप लगभग 60% मुकदमों पर स्थगनादेश दिए गए, जिनका औसत विलंबन 4.3 वर्ष[14] है। विभिन्न उच्च न्यायालयों में लंबे अंतरिम आदेश, एकपक्षीय अनंतिम स्थगनादेश, अंतिम बहसों पर मुकदमों के विलंबन

17 [17]प्रोवेस 27,000 से भी अधिक कंपनियों के वित्तीय निष्पादन का डाटाबेस है। इसमें राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज और बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज पर व्यापार करने वाली सभी कंपनियां, हजारों असूचीबद्ध सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियां और सैकड़ों निजी लिमिटेड कंपनियां शामिल हैं। इसमें ऐसे अनेक महत्वपूर्ण व्यावसायिक निकाय भी शामिल हैं जो पंजीकृत कंपनियां नहीं हैं।

18 [18]जांच के बाद, विभाग या निर्धारितियों के पास आय कर-अपील के आयुक्त, आय कर अपील अधिकरण, उच्च न्यायालयों और अंततोगत्वा भारत के उच्चतम न्यायालय में जाने का विकल्प होता है। इसी तरह, अप्रत्यक्ष कर की मुकदमेबाजी के मामले में भी, विभाग और निर्धारिती के पास सीमा शुल्क, उत्पाद शुल्क और सेवा कर अपील अधिकरण (सी स्टैट) के आयुक्त (अपील), उच्च न्यायालयों और भारत के उच्चतम न्यायालय के समक्ष जाने का विकल्प होता है।

चित्र 9: प्रत्यक्ष कर

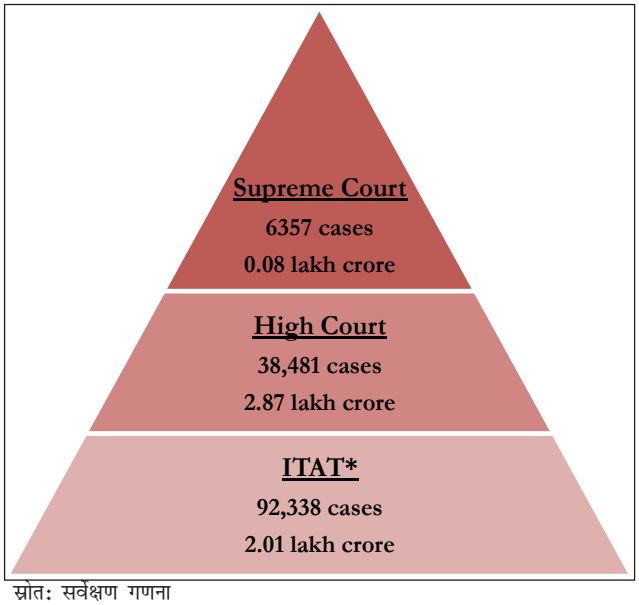

स्रोत: सर्वेक्षण गणना

* अनन्तिम अनुमान

चित्र 10: अप्रत्यक्ष कर

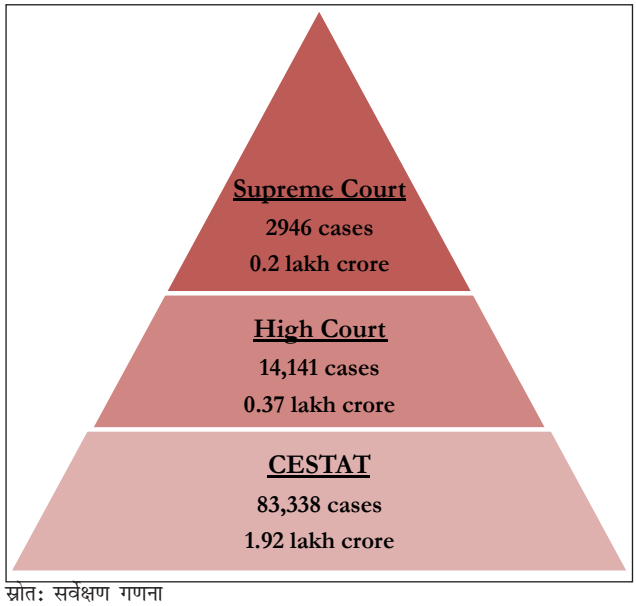

स्रोत: सर्वेक्षण गणना

की बढ़ती दर, और आईपीआर मामलों[15] में अंतिम निर्णय नहीं देना आईपीआर कार्य पद्धति की कुछ सामान्य विशेषताएं हैं। इन मुकदमों में से लगभग 50% मुकदमें वकालत (सानुरोध याचना) के चरण में ही लंबित पड़े हैं, यह वह चरण है जिसमें पक्षकारों को सुनवाई से पहले औपचारिक अपेक्षाएं पूरी करनी होती हैं (देखें अनुबंध 11 और 12)। पेटेंट की फाइलिंग एवं अनुदान में बिलंब तथा लंबितता के ब्यौरे आर्थिक समीक्षा के अध्याय 8 में।

9.16 इन मुकदमों में से अन्य 12% मुकदमें अंतिम निपटान के लिए लंबित हैं। अंतिम निर्णय की प्रतीक्षा कर रहे मुकदमों की औसत आयु बहुत अधिक 7.9 वर्ष है, जो यह दर्शाती है कि अंतिम निपटान के चरण में लंबित पड़े मुकदमों की और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

लंबन और देरी: लागतें

देरी की लागतें

9.17 लंबन और देरियों की लागतों का अनुमान लगाना कठिन है। परंतु कुछ व्याख्यात्मक आंकड़े संभाव्य महत्व का बोध कराने में काफी सूचनाप्रद हैं। नीचे सारणी 3 में ऐसे छह अवसंरचनात्मक मंत्रालयों में सरकारी परियोजनाओं की संख्या और उनका मूल्य दिया गया है जिन पर वर्तमान में न्यायालय की निषेधाज्ञाओं के द्वारा स्थगनादेश (रोक लगाई दिए गए) हैं। और साथ ही इन स्थगनों की औसत

सारणी 5: विभाग की याचिका दर और सफलता दर

	प्रत्यक्ष कर		अप्रत्यक्ष कर	
न्यायालय	सफलता दर[19]	याचिका दर[20]	सफलता दर	पेंशन दर
उच्चतम न्यायालय	27%	87%	11%	63%
उच्च न्यायालय	13%	83%	46%	39%
आईटीएटी/सीस्टैट	27%*	88%*	12%	20%

स्रोत: समीक्षा परिकलन

स्रोत: समीक्षा परिकलन

* अनन्तिम अनुमान

[19] विभाग की याचिका ?? विभाग द्वारा दायर मामलों की कुल संख्या का प्रतिशत है शेष अपीलें वे हैं जो निर्धारितियों द्वारा दायर की गई हैं।

[20] वभाग की सफलता दर उन मामलों के अनुपात के रूप में परिकलित की गई है, जिनमें संबंधित न्यायालय अथवा अधिकरण विभाग के पक्ष में पूर्णत: अथवा अंशत: फैसला सुनाता है। न्यायायिक प्राधिकरण द्वारा अलग कर दिए गए मामले इस परिकलन में शामिल नहीं किए गए हैं।

बॉक्स 1: उच्चतम न्यायालय का कर संबंधी मुकदमों का सफल प्रबंधन

उच्चतम न्यायालय देश का सबसे उच्चतम न्यायालय है जो विभिन्न प्रकार के मामलों को देखता है। जब ऐसे महत्वपूर्ण कानूनी प्रश्नों अथवा संवैधानिक मुद्दों; जिनमें विशेष-आकार वाली न्यायपीठों का गठन अपेक्षित होता है, की देखरेख नहीं हो पाती तो यह न्यायालय, देश के उच्च न्यायालयों तथा अन्य मंचों से आए मामलों पर निर्णय देने के लिए दो न्यायाधीशों वाली न्यायपीठों में सुनवाई करता है। इन न्यायपीठों से विभिन्न प्रकार की विषय-वस्तु, जिनमें संवैधानिक कानून, दंड कानून, सिविल कानून, वाणिज्यिक कानून और कराधान आदि शामिल हों, वाले मामलों की सुनवाई करने और निर्णय देने की अपेक्षा की जाती है। प्रत्येक न्यायाधीश से उसके समक्ष प्रस्तुत तथ्यों और कानून में निपुण होने तथा न्याय के प्रश्न को स्पष्ट करने तथा तथा निपटान करने के लिए विवादों का समाधान करने की अपेक्षा की जाती है।

हालांकि, कराधान के लिए एक विशेष न्यायपीठ के गठन संबंधी न्यायालय के हाल ही के प्रयोग के प्रभावशाली परिणाम प्राप्त हुए हैं, जिन्हें अन्य विषय-वस्तुओं वाले मामलों में दोहराया जा सकता है तथा ऐसे अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा अनुकरण किया जा सकता है जिनमें दैनिक सुनवाईयों के लिए विशेष रोस्टर नहीं हैं। चित्र 14 यह दर्शाता है कि वर्ष 2014 में कर-न्यायपीठ के गठन होने के बाद से उच्चतम न्यायालय कर संबंधी मामलों की बढ़ती हुई लंबितता प्रवृत्ति को बदलने में सक्षम रहा है। यह ध्यान देने योग्य है कि इस अवधि के दौरान, उच्चतम न्यायालय ने विभाग के अवरूद्ध दावों पर अपना भरोसा कम किया है तथा मामलों की सुनवाई तथा निपटान पर ध्यान केन्द्रित किया है, जैसा कि चित्र 15 से साक्ष्य मिलता है।

चित्र 1: आईटीएटी, उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय में कर संबंधी मामलों की

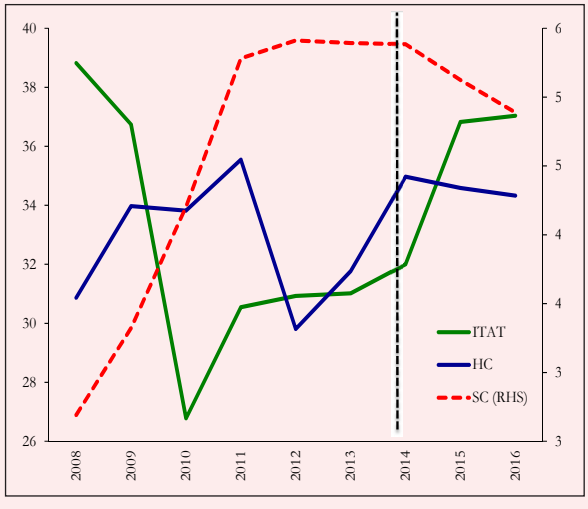

स्रोत: कर-योजना और अनुसंधान इकाई।

चित्र 2: उच्चतम न्यायालय में रुके हुए कर संबंधी मामलों का ब्यौरा

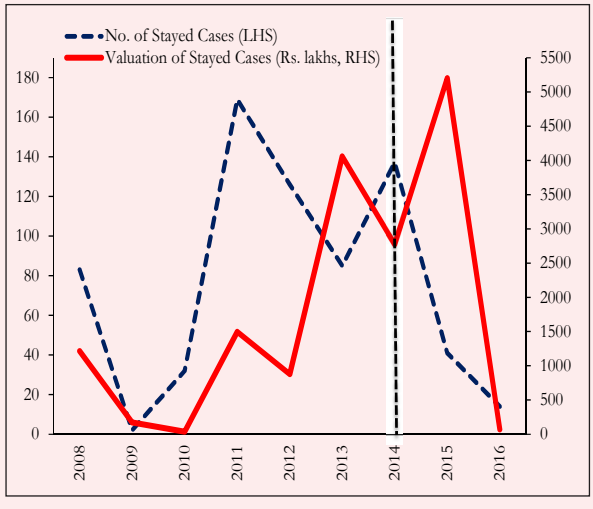

स्रोत: कर-योजना और अनुसंधान इकाई।

लंबितता तथा पिछले बकाया मामलों को कम करने के अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय की इस व्यवस्था द्वारा विधि से संबंधित अनेक मामलों में निर्णय दिए तथा न्यायालय को विधि संबंधी प्रश्नों को स्पष्ट करने और निपटान करने की इसकी परिकल्पित भूमिका का निवर्हन करने की गुजांइश प्रदान की। विशेष न्यायपीठ ने वर्ष 2015 में 197 निर्णय दिए, जो कि पिछले तीन वर्षों में दिए गए निर्णयों का लगभग तीन गुना थे।[19]

एक ही प्रकार की विषय वस्तु से संबंधित न्यायपीठों के अन्य महत्वपूर्ण लाभ हैं। ऐसी न्यायपीठें यह सुनिश्चित करती हैं कि उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में गतिरोध नहीं हो तथा विभिन्न न्यायपीठों द्वारा न्याय के समान प्रश्न पर भिन्न तथा गतिरोध वाले पूर्व निर्णयों के वर्तमान चलन को कम किया जा सके। इसके अलावा वे, न्यायधीश को उसके समक्ष प्रस्तुत विधि की विशिष्ट शाखा पर ही ध्यान केन्द्रित करने की व्यवस्था करते हुए, कार्य कुशलता का निर्माण करती हैं। इस मॉडल को जब कभी भी आवश्यक समझे जाने पर उच्चतम न्यायालय में विधि संबंधी अन्य वाणिज्यिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में दोहराया जा सकता है और इसे देश के प्रत्येक उच्च न्यायालय द्वारा दोहराया जाना चाहिए।

उच्चतम न्यायालय का अनुभव इस बात की भी पुष्टि करता है कि न्यायालय लंबितता को दूर करने के लिए विशेष रूप से मामलों के विशिष्ट प्रबंधन द्वारा, मौजूदा डिजाइन और क्षमता प्रतिबंधों के भीतर ही कदम उठा सकते हैं, उदाहरण के लिए विशिष्ट न्यायपीठों के माध्यम से भी मामले के विभिन्न चरणों के प्रबंधन में उत्कृष्टता हो सकती है। वर्तमान में, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश निम्नलिखित क्रम में मामलों की सुनवाई करते हैं: अनुपूरक मामले (नए मामले), अग्रिम मामले (दर्ज मामले), एवं नियमित मामले (अंतिम रूप से निपटान हेतु सूचीबद्ध मामले)। प्रत्येक न्यायाधीश, दिन की शुरूआत नए मामलों से करता है, तथा किसी भी तरह से दिन के दूसरे प्रहर में ही पुराने मामलों पर पहुंच पाता है। उच्चतम न्यायालय प्रबंधन का अनुभव यह दर्शाता है कि ऐसी श्रेणी-वार न्यायपीठ बनाना और अधिक विवेकसंगत हो सकता है, जो अंतिम सुनवाई के स्तर पर मामलों की विशेष रूप से देखरेख करें ताकि उन्हें ऊपर दर्शाए गए आईपीआर डाटा से प्राप्त साक्ष्यानुसार नजरअंदाज नहीं किया जा सके।

---

[1] http://www.livemint.com/Politics/EFALB5X66jz0i2KkiE7WeL/The-apex-courts-tax-bench-experiment.html.

सारणी 6: उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय की संख्या एवं रिक्तियों का ब्यौरा

कुल संख्या	रिक्तियों की संख्या प्रतिशतता में रिक्तिया	कुल क्षमता की वर्तमान कार्य क्षमता	वर्तमान कार्य क्षमता
1079	392	36.3%	63.6%

स्रोत: विधि और न्याय मंत्रालय।

अवधि भी दी गई है। इसमें ऐसी अन्य केंद्रीय सरकारी परियोजनाएं या राज्य स्तरीय बहुसंख्यक परियोजनाएं शामिल नहीं हैं जिन्हें इसी तरीके से न्यायालय की निषेधाज्ञाओं के द्वारा रोका गया है, इसमें ऐसी विगत परियोजनाएं भी शामिल नहीं हैं जिनमें निषेधाज्ञाओं के कारण विलंब हुआ परंतु बाद में इन्हें अपने प्रचालन फिर से चालू करने की अनुमति दी गई थी। रोकी गई परियोजनाओं की परियोजना लागतें (स्टॉक)-उस समय जब इन्हें प्रारंभ में स्थगनादेश मिला था-लगभग 52,000 करोड़ रु. बनती हैं।

9.18 विद्युत, सड़क और रेल सर्वाधिक प्रभावित मंत्रालय हैं। चूंकि परियोजना लागतें मुख्यत: ऋण द्वारा वित्त पोषित होती हैं, संभावना है कि परियोजना लागतें स्थगन (रोक) की औसत अवधि के कारण 60 प्रतिशत तक बढ़ गई हों। भारतीय स्टेट बैंक से प्राप्त आंकड़ों (सारणी 4) से उन निजी क्षेत्र की अवसंरचनात्मक परियोजनाओं की भी इसी तरह की स्थिति का पता चला है जिन्होंने मध्यस्थता संबंधी कार्यवाही या न्यायालयी मुकदमों के कारण भारतीय रिज़र्व बैंक के मुख्य परिपत्र के पैरा 4.3.15.3 के तहत अतिरिक्त समय मांगा था (अनुबंध 13)।

चित्र 11: जीडीपी के प्रतिशतांक के रूप में न्यायालयों को आवंटित बजट

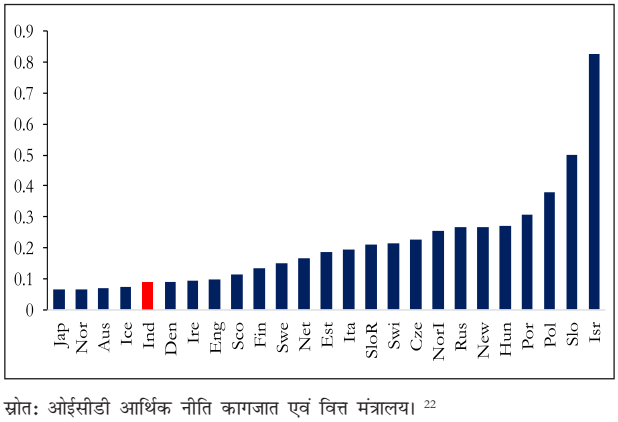

स्रोत: ओईसीडी आर्थिक नीति कागजात एवं वित्त मंत्रालय। [22]

9.19 अपीलीय अधिकरणों, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में बढ़ते लंबन और साथ ही निषेधाज्ञाओं व अन्य गैरकारगर साधनों के बढ़ते प्रयोग के समग्र प्रभाव के परिणामस्वरूप कारपोरेट भारत के विधिक खर्चे उत्तरोत्तर रूप से बढ़ रहे हैं, जैसाकि चित्र 8 में दर्शाया गया है।

केंद्र सरकार के कर: प्रकरण अध्ययन

9.20 लंबन, बकाये और देरियां केवल न्यायालयों और अधिकरणों की ही विशेषता नहीं है बल्कि ये कर विभागों और इनकी बहुस्तरीय प्रक्रिया से भी जुड़े हैं।[18]

9.21 मार्च 2017 की स्थिति के अनुसार, कुल 137,176 प्रत्यक्ष कर मामले आय कर अपील अधिकरण (आईटीएटी), उच्च न्यायालयों और उच्चत्तम न्यायालय के स्तर पर विचाराधीन हैं। (चित्र 9)। इन मामलों में से केवल 0.2% कुल मांग मूल्य का लगभग 56% थे; लंबित मामलों का 66%, जो दावित राशि के सन्दर्भ में प्रत्येक 10 लाख मूल्य से कम था, लंबित मामलों का लाक्ड-अप मूल्य मात्र 1.8% था।

9.22 अप्रत्यक्ष करों के मामले में भी स्थिति वही है जैसा कि चित्र 10 में दर्शाया गया है। मार्च 2017 को समाप्त तिमाही के अनुसार, आयुक्त (अपील), सीस्टैट, उच्च न्यायालयों और उच्चत्तम न्यायालय में कुल मिलाकर 1.45 लाख अपीलें लंबित थी, जिनका विभाग द्वारा 2.62 लाख करोड़ रु. मूल्य आंका गया था। मार्च 2017 को समाप्त तिमाही तक मुकदमेबाजी (अपील अधिकरणों और ऊपर के न्यायालयों में) में फंसे अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष कर दोनों के दावों की मूल्य राशि लगभग 7.58 लाख करोड़ रु. थी, जो जीडीपी का लगभग 4.7 से अधिक है। विभाग के लिए ये आंकड़े विशेषकर संलिप्त राशियों का मूल्य, समय के साथ-साथ तेज़ी से बढ़ता रहा है (देखें अनुबंध 14)[2]।

9.23 दिलचस्प बात यह है कि प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर दोनों तरह के अभियोजन के लिए अपील के सभी

---

21 [21] न्यायिक निष्पादन एवं निर्धारक कारक : क्रास कंट्री परिप्रेक्ष्य, ओईसीडी आर्थिक नीति पत्र सं. 5, जून 2013।

22 जैप-जापान, नार-नार्वे, औस-आस्ट्रेलिया, आइस-आइसलैंड, इण्ड-इण्डिया, डेन-डेनमार्क, आयर-आयरलैंड, इंग-इग्लैंड एण्ड वेल्स, स्कॉ-स्काटलैंड, फिन-फिन लैंड, स्वी-स्वीडन, नेट-नीदरलैंड, ईस्ट-एस्टानिया, इटा-इटली, एस एल ओ आर-स्लोवाक गणतंत्र, स्वी-स्विट्जर लैंड, चेक-चेक गणतंत्र, नार्ल-उत्तरी आयरलैंड, रूस-रूसिया, न्यू-न्यूजीलैंड, हन-हंगरी, पोर-पूर्तगाल, पोल-पोलैंड, स्लो-स्लोवेना, आइस-इजरायल

तीनों-अपील अधिकरणों, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय-स्तरों पर विभाग की सफलता दर[18] 30% से नीचे है। कुछ मामलों में यह बहुत कम 12% है। (देखें सारणी 5)। विभाग सुस्पष्ट ढंग से लगभग 65% मुकदमें हार जाता है। कुछ समय से, विभाग की सफलता दर केवल घट ही रही हैं जबकि निर्धारितियों की सफलता दर बढ़ रही हैं (अनुबंध XV)।

9.24 इसके बावजूद, विभाग सर्वाधिक बड़ा वादी है। जैसाकि सारणी 5 में दर्शाया गया है, प्रत्यक्ष करों के मामले में दर्ज कुल अपीलों में से विभाग की अपीलें लगभग 85% हैं हालांकि अप्रत्यक्ष करों के मामले में इस संख्या में सुधार आया है। मार्च 2017 को समाप्त होने वाली तिमाही तक प्रत्यक्ष करों के लंबित कुल मामलों में से विभाग द्वारा प्रारंभ किए गए 88% अभियोजन आईटीएटी में और उच्च न्यायालयों में, तथा 83% अभियोजन उच्चतम न्यायालयों में लंबित हैं।

9.25 लंबे समय बाद निम्नलिखित तस्वीर उभर कर सामने आई है: हालांकि लंबे समय से विभाग की सफलता दर काफी घटी है, फिर भी यह अडिग रहा है, और न्यायिक सोपान के प्रत्येक स्तर पर अभियोजन को निरंतर जारी रखे हुए है। (देखें अनुबंध 15 और 16)। चूंकि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के कार्य बोझ का एक बड़ा हिस्सा कर-अभियोजन है, अत: न्यायपालिका के उच्च स्तरों पर लड़ी गई अपीलों में कमी होने से न्यायालय और विभाग लाभ की स्थिति में होंगे। जितनी अपीलें कम होंगी न्याय की स्थिति उतनी ही सुदृढ़ होगी।.

न्याय-प्रशासन पर व्यय

9.26 चित्र 16 द्वारा दर्शाए गए अनुसार, राज्यों तथा केन्द्र द्वारा न्याय-प्रशासन पर कुल व्यय जीडीपी का लगभग 0.08-0.09% होता है जो कि अन्य देशों, विशेष रूप से सामान्य विधि देशों की तुलना में कम है (चित्र 11)। अनुसंधान यह दर्शाता है कि जहां न्याय-व्यवस्था पर सामान्य रूप से व्यय करने से लंबितता पर प्रभाव नहीं पड़ सकता है, वहीं आधुनिकीरण, कम्प्यूटरीकरण और तकनीकी पर किए जाने वाले व्यय से औसतन सुनवाई अवधि में कमी आती है।[21]

9.27 वित्त आयोग, राज्यों के लिए कार्य निष्पादन-आधारित प्रोत्साहन के रूप में निचली न्याय-व्यवस्था में लंबितता को दूर करने के लिए किए गए प्रयासों और प्रगति आदि पर विचार कर सकता है। इसके अलावा मामला दर्ज करने, तामील तथा अन्य सुपुर्दगी संबंधित मुद्दों; जो कि अधिकतम विलंब का कारण होते हैं; पर व्यय करने को प्राथिमिकता दी जाएं। आर्थिक सर्वे हेतु समेकित किये गए आंकड़े यह बताते है कि किसी मामले की संपूर्ण अवधि का लगभग 30% औपचारिक कार्यवाहियों जैसे-समन और नोटिस की तामील में व्यतीत हो जाता है (अनुबंध 17 देखें), जो कि ऐसे मुद्दें हैं जिन्हें मामला दर्ज करने और तामील कार्यतंत्र संबंधी तकनीकी उन्नयन के माध्यम से आसानी से हल किया जा सकता है।.

9.28 हालांकि, अतिरिक्त न्यायिक क्षमता का निर्माण तब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक मौजूदा क्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं किया जाए। वर्तमान न्याय-व्यवस्था इसकी मौजूदा क्षमता के 63.6% पर संचालित हो रही है (सारणी 6), जो कि न्यायालयों में लंबितता को दूर करने के लिए अपनी क्षमता की गंभीर रूप से नुकसान पहुंचा रही है। 1990 के दशक के अनुभव इस बात की पुष्टि करते हैं कि 1990 के मध्य के दशक में आयकर अपीलीय अधिकरणों के मामले में बढ़ती हुई न्यायिक व्यवस्था ने भारी मात्रा में लंबितता को कम किया। (अनुबंध 18 देखें)

नीतिगत निहितार्थ

9.29 न्याय व्यवस्था के विभिन्न स्तरों के माध्यम से लंबितता, विलंब तथा निषेधाज्ञा, न्यायालयों पर जरूरत से ज्यादा बोझ डाल रहे हैं तथा विशेष रूप से आर्थिक मामलों की एवं अन्य मामलों की प्रगति पर गंभीर प्रभाव डाल रहे हैं। सरकार तथा न्यायालयों दोनों को साथ मिलकर एक ऐसी समस्या; जो अर्थव्यवस्था से एक बड़ी राशि छीन रही है, का निवारण करने के लिए बड़े पैमाने वाले तथा उतरोत्तर बढ़ने वाले सुधार करने की आवश्यकता है। निम्नलिखित कुछ उपायों पर विचार किया जा सकता है:

(i) निचले न्यायालयों में न्याय-व्यवस्था की क्षमता में विस्तार करना तथा उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के मौजूदा भार को कम करना।

---

[23] कारोबार की सुगमता के लिए सुधार मापदंडों पर चर्चा करने के लिए गठित सरकारी कार्यबल ने यह नोट किया : ''(वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत वाणिज्यिक विवादों को सुगम बनाने के लिए शुरू किए गए मापदंडों का संकेतक डाटा पर नया प्रभाव रहा था। चूंकि मुंबई और दिल्ली के उच्च न्यायालयों का मूल न्यायाधिकार क्षेत्र है, इसलिए वाणिज्यिक न्यायालय जिला स्तर पर स्थापित नहीं किए गए हैं। इसके बजाय उच्च न्यायालयों के वाणिज्यिक प्रभाग स्थापित किए गए हैं, इस संबंध में दिल्ली और मुंबई उच्च न्यायालयों से परामर्श किया जा रहा है तथा विधि कार्य विभाग से इनपुट (जानकारी) मांगे गए हैं।

[24] देवेश कपूर और मिलन वैष्ण, स्टंथनिंग इंडियान रूल ऑफ लॉ http://www.livemint.com/Opinion/N3pY337lNutBRtXQs7GO3O/Strengthening-Indias-rule of-law.html.

• एक सुगम अनुबंध प्रवर्तन व्यवस्था के लिए, निचली न्याय-व्यवस्था में; विशेष रूप से आर्थिक और वाणि ाज्यिक मामलों को देखने के लिए, क्षमता-निर्माण करना आवश्यक होगा तथा उच्च न्यायालयों को कानून के प्रश्नों को स्पष्ट करने तथा संगत बनाने पर ध्यान केन्द्रित करने की गुजांइश देनी होगी। इसी के लिए, सिविल प्रक्रिया संहिता, वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम तथा अन्य संबंद्ध वाणिज्यिक विधायन में संशोधनों पर विचार किया जाना चाहिए (अनुबंध 19 देखें)। इन उपायों को आवश्यक रूप से न्यायिक अकादमियों द्वारा विशेष रूप से वाणिज्यिक और आर्थिक मामलों में न्यायाधीशों को प्रशिक्षित करने के प्रयासों द्वारा मजबूत बनाया जाना चाहिए।

• उच्च न्यायालयों के मूल तथा वाणिज्यिक न्यायाधिकार-क्षेत्र में कमी करना अथवा हटाना, एवं निचली न्याय-व्यवस्था को ऐसे मामले देखने के लिए समर्थ बनाना। दिल्ली उच्च न्यायालय से मिले आरंभिम परिणाम यह सुझाव देते हैं कि 2016 में मूल न्यायाधिकार क्षेत्र के आकार में कमी ने न्यायालय को इसकी समस्त लंबितता को कम करने के लिए अधिक समय देने की गुंजाइश दी। (अनुबंध 20 देखें);[23]

• न्यायालय अपने विवेकाधीन न्यायाधिकार-क्षेत्र के आकार और पैमाने पर पुनः विचार कर सकते हैं तथा जब तक आवश्यक न हो उनका सहारा लेने से बचें ताकि उच्चतर न्याय-व्यवस्था की परिकल्पित संवैधानिक और परमादेश उच्चता को फिर से प्राप्त किया जा सके।

• मौजूदा न्यायिक क्षमता का पूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए।

(ii) कर विभाग अपनी निम्न सफलता दर को देखते हुए, अपीलों को सीमित करते हुए और अधिक आत्म-संयम बरत रहा है। इसे अपीलों को सीमित करने के प्रत्याशित नियमों के रूप में देखा जा सकता है, उदाहरण के लिए चार उच्च न्यायालय के निर्णयों में से एक अथवा तीन विवाचन मामलों में से एक में; अथवा उत्प्रेरित करने वाली नौकरशाही-जोखिम निवारण में 3सी (सीबीआई, सीवीसी और सीएजी) की महती भूमिका को देखते हुए इस विभाग के विरुद्ध कर-निर्णयों की अगली अपीलों पर निर्णय करने के लिए संभवतया एक स्वतंत्र पैनल का निर्माण किया जा सकता है। इसके अलावा संवीक्षा के स्तरों की संख्या कराध ान के मामले में 3 मंचों तक सीमित की जा सकती है।

(iii) न्याय-व्यवस्था पर राज्य-व्यय में भारी मात्रा में वृद्धि, विशेष रूप से उनके आधुनिकीकरण पर व्यय वृद्धि। भावी वित्त आयोग न्यायालय के आधुनिकीकरण और डिजीटली. करण पर व्यय की मात्रा बढ़ाने पर विचार कर सकते हैं। इसके लिए अधिकरणों और न्यायालयों दोनों के लिए संसाध नों हेतु अधिक प्रावधान कर सहयोग देने की आवश्यकता है। इसक अतिरिक्त, विधायनों (और संभवतः न्यायिक निर्णय भी जो नए न्यायाधिकार क्षेत्रों का विस्तार अथवा शुरूआत करते हैं) के साथ न्यायिक-क्षमता और सार्वजनिक व्यय ज्ञापन भी होने चाहिएं जो बढ़ती हुई न्यायिक-आवश्यकता का समाधान करने के लिए अपेक्षित आवश्यक प्रावधानों को उपयुक्त रूप से तैयार करते हैं और उनका पर्याप्त वित्तपोषण सुनिश्चित करते हैं। इसके लिए अपेक्षित राशि बहुत ही कम होगी लेकिन इसके परिणाम बहुत व्यापक हो सकते हैं।

(iv) कर संबंधी मामलों के निपटान में उच्चतम न्यायालय की सफलता के आधार पर और अधिक विषय-वस्तु और स्तर-विशिष्ट न्यायपीठों का निर्माण करना जो न्यायालय को लंबितता तथा विलंब को दूर करने के लिए आंतरिक विशेषज्ञता और सक्षमता के निर्माण की गुंजाइश देती हैं।

(v) निषेधाज्ञाओं और स्थगनों का आसरा लेना कम करना। न्यायालय प्राथमिकता वाले स्थगन मामलों पर विचार कर सकते हैं तथा एक ऐसी सख्त समय सीमा लगा सकते हैं जिसके भीतर अंस्थायी स्थगन वाले मामलों पर निर्णय किया जा सकें, विशेष रूप से तब जब उनमें सरकारी अवसंरचनात्मक परियोजनाएं शामिल हों; एवं

(vi) न्यायालय-मामला प्रबंधन तथा न्यायालय स्वचालन प्रणाली को सुधारना।[24] ईओडीबी 2018 भारत के खराब न्यायालय प्रबंधन तथा न्यायालय स्वचालन संबंधित विशिष्ट पहलुओं की पहचान करता है, जिसे न्यायालय और सरकार द्वारा एक आदर्श के रूप में प्रयोग किया जा सकता है (देखें अनुबंध 21)। न्यायिक समयावधि को बचाने के लिए यूके की क्राउन कोर्ट मेनेजमेंट सर्विसेज जैसी पहलों पर विचार किया जा सकता है जो कि प्रशासनिक दायित्वों के प्रबंधन और देखरेख के प्रति समर्पित हैं।

9.30 आज के समय में, न्याय-व्यवस्था एवं सरकार की अन्य शाखाओं के मध्य महत्ता तथा वैधता के बारे में पारस्परिक प्रत्यारोप हावी रहते हैं। बात यह नहीं है कि कौन सा पक्ष सही है, वरन प्रत्येक की वैधता और प्रभाविता दूसरे की कमी पर निर्भर करती है। कोई यह कह सकता है कि

सभी शाखाओं में अपरिवर्तनशील वैधता और प्रभाविता की एक व्यवस्था है, जहां एक पक्ष खोता है तो दूसरा प्राप्त करता है। संभवत: यह भी सत्य है कि गुण और दोष रहने के बावजूद, न्यायपालिका विशेष रूप से उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय को आज भी निष्पक्ष और अंतिम निर्णायक समझा जाता है। न्यायालय में बढ़ते हुए मामलों की समस्या का समाधान निश्चित रूप से उपर्युक्त अवधारणा को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।

9.31 जीएसटी के हाल के अनुभव ने यह दर्शाया है कि केन्द्र और राज्यों के मध्य लंबवत सहयोग-सहयोगात्मक संघवाद-परिवर्तनकारी आर्थिक नीतिगत बदलाव सामने लाया है। संभवतया उसकी क्षैतिजीय भिन्नता-जिसे कोई सहयोगात्मक पृथक्करण कह सकता है-जो एक ओर न्यायपालिका एवं दूसरी ओर कार्यकारी/विधायिका के मध्य संबंध में लागू हो सकता है। वास्तव में, इन दोनों के मध्य स्वतंत्रता और वैधता बनाए रखने के लिए विभाजन (शक्तियों के पृथकरण) की स्पष्ट रेखाएं हैं। यहां तक कि इन रेखाओं का सम्मान करते हुए, इन शाखाओं के लिए यह संभव और वांछनीय होना चाहिए कि वे संपूर्ण आर्थिक गतिविधि की सहायता करने के लिए त्वरित न्याय सुनिश्चित करने के लिए एक साथ मिलकर कार्य करें।

सन्दर्भ

Acemoglu, Daron, Simon Johnson, and James A. Robinson. "The colonial origins of comparative development: An empirical investigation." *American economic review* 91.5 (2001): 1369-1401.

Acemoglu, Daron, and Simon Johnson. "Unbundling institutions." *Journal of political Economy* 113.5 (2005): 949-995.

Balganesh, Shyamkrishna. "The Constitutionalisation of Indian Private Law ", in Choudhry, Sujit, Madhav Khosla, and Pratap Bhanu Mehta, eds. *The Oxford Handbook of the Indian Constitution*. Oxford University Press, 2016.

Chemin, Matthieu. "Does court speed shape economic activity? Evidence from a court reform in India." *The Journal of Law, Economics, & Organization* 28.3 (2010): 460-485.

Chowdhury, Rishad Ahmed. "Missing the Wood for the Trees: The Unseen Crisis in the Supreme Court." *NUJS L. Rev.* 5 (2012): 351.

Dhawan, Rajeev. "The Supreme Court under Strain: the Challenges of Arrears" MN Tripathi Pvt. Ltd. Bombay (1978).

Dhawan, Rajeev. "Litigation Explosion in India," MN Tripathi Pvt. Ltd. Bombay (1986).

Eisenberg, Theodore, Sital Kalantry, and Nick Robinson. "Litigation as a measure of well-being." *DePaul L. Rev.* 62 (2012): 247.

Esposito, Gianluca, Mr Sergi Lanau, and Sebastiaan Pompe. *Judicial System Reform in Italy-A Key to Growth*. No. 14-32. International Monetary Fund, 2014.

Galanter, Marc. "India's Tort Deficit: Sketch for a Historical Portrait." *Fault Lines: Tort Law as Cultural Practice* (2009): 47-65.

Hazra, Arnab Kumar, and Bibek Debroy, eds. *Judicial reforms in India: Issues and aspects*. Academic Foundation, 2007.

Islam, Roumeen. 2003. "Do More Transparent Governments Govern Better?" Policy Research Working Paper 3077, World Bank, Washington, DC.

Jones, Eric. *The European miracle: environments, economies and geopolitics in the history of Europe and Asia*. Cambridge University Press, 2003.

Kapur, Devesh, and Pratap Bhanu Mehta. *Public Institutions in India: Performance and Design*. Oxford University Press, 2007.

Kapur, Pratap Bhanu Mehta, and Milan Vaishnav (Eds), Rethinking Public Institutions in India, Oxford University Press, 2017.

Law Commission of India- Report No. 245: Arrears and Backlog: Creating Additional Judicial (wo)manpower, 2014.

Mehta, Pratap Bhanu. "India's judiciary: The promise of uncertainty." *The Supreme Court Versus the Constitution: A Challenge to Federalism* (2006): 155-177.

Moog, Robert. "Indian litigiousness and the litigation explosion: challenging the legend." *Asian Survey* 33.12 (1993): 1136-1150.

North, Douglass (1990), Institutions, Institutional Change, and Economic Performance. Cambridge: Cambridge University Press.

North, Douglas E. "Institutions, Institutional Change and Public Performance" (1990).

North, Douglass C., and Robert Paul Thomas. *The rise of the western world: A new economic history*. Cambridge University Press, 1973.

OECD Economic Policy Papers No. 5, "Judicial Performance and its determinants: a cross-country perspective*"* 2013.

Porta, Rafael La, et al. "Law and finance." *Journal of political economy* 106.6 (1998): 1113-1155.

Rajagopalan, Shruti. "State capacity freed is state capacity built." *Livemint*, http://www.livemint.com/Opinion/cVnodqEYEF2Uiua2nxQ2oN/State-capacity-freed-is-state-capacity-built.html (2017).

Rajamani, Lavanya, and Arghya Sengupta. "The Supreme Court of India: power, promise, and overreach." *The Oxford Companion to Politics in India* (2010).

Robinson, Nick. "A quantitative analysis of the Indian Supreme Court's workload." *Journal of Empirical Legal Studies* 10.3 (2013): 570-601.

Robinson, Nick. "Structure matters: The impact of court structure on the Indian and US Supreme Courts." *The American Journal of Comparative Law* 61.1 (2013): 173-208.

Robinson, Nick. "Expanding judiciaries: India and the rise of the good governance court." *Wash. U. Global Stud. L. Rev.* 8 (2009): 1.

Robinson, Nick. "A court adrift." *Frontline*, http://www.frontline.in/cover-story/a-court-adrift/article4613892.ece (2013).

Rodrik, Dani, Arvind Subramanian, and Francesco Trebbi. "Institutions rule: the primacy of institutions over geography and integration in economic development." *Journal of economic growth* 9.2 (2004): 131-165.

Somanathan, T. V. "The Administrative and Regulatory State", in Choudhry, Sujit, Madhav Khosla, and Pratap Bhanu Mehta, eds. *The Oxford Handbook of the Indian Constitution*. Oxford University Press, 2016.

Sokoloff, Kenneth L., and Stanley L. Engerman. "History lessons: Institutions, factors endowments, and paths of development in the new world." *The Journal of Economic Perspectives* 14.3 (2000): 217-232.

Thiruvengadam, Arun. "Tribunals", in Choudhry, Sujit, Madhav Khosla, and Pratap Bhanu Mehta, eds. *The Oxford Handbook of the Indian Constitution*. Oxford University Press, 2016.